नायिका २1 211

Date: / /
Page No.:

नायिका "शकुन्तला" का चरित्र-चित्रण →

शकुन्तला कालिदास के रूपकों की सर्वोत्कृष्ट नायिका है। ~~आदर्शसखी के~~ आदर्शभार्या के रूप में धारिणी तथा आदर्श पतिव्रता के रूप में औशीनरी का चरित्र-चित्रण किया गया है। आदर्श गृहिणीत्व भारतीय नारी का सर्वोत्तम रूप है। उसके अन्दर आदर्श भार्या एवं पतिव्रता दोनों का सन्निवेश हो जाता है। कालिदास ने शकुन्तला का चित्रण आदर्श गृहिणीत्व भारतीय नारी का सर्वोत्तम रूप है। उसके अन्दर आदर्श भार्या एवं पतिव्रता दोनों का सन्निवेश हो जाता है। कालिदास ने शकुन्तला का चित्रण आदर्श गृहिणी के रूप में किया है। मालविकाग्नि-मित्रम् एवं विक्रमोर्वशीयम् की तरह ही अभिज्ञानशाकुन्तलम् का भी प्रमुख विषय आदर एवं सम्मान के रूप में प्रणय का चरम विकास है। शकुन्तला के प्रति कर्तव्य आचरण के सम्बन्ध में दुष्यन्त द्वारा अनसूया को दिये गये वचन से इस तथ्य की संपुष्टि होती है। दुष्यन्त कहता है कि अनेक स्त्रियों के होने पर भी मेरे वंश की दो ही प्रतिष्ठाएँ हैं — समुद्ररूपी मेखला से युक्त पृथ्वी तथा तुम्हारी यह सखी शकुन्तला। (1)(अभि० शा०)(3/17)। कन्या को आदर्श पत्नी के रूप में विकसित करना ही अभिज्ञानशाकुन्तलम् का मुख्य उद्देश्य है। कन्या के रूप में मालविका और उर्वशी से अधिक मोहक एवं आकर्षक स्वाभाविक सौन्दर्य शकुन्तला का है। वृक्षसेचनक्रम में सखियों के साथ आती हुई शकुन्तला को ध्यान से देखकर राजा दुष्यन्त ने कहा कि यदि तपोवन में रहनेवाले लोगों का अन्तःपुर में भी दुष्प्राप्य ऐसा मनोहर शरीर है, तो मानो वन की लताओं ने अपने गुणों से उद्यान की लताओं को तिरस्कृत कर दिया है। (1)

~~(…)~~ ।

"राजा --- (निपुण निरूप्य) अहो! मधुरमासां दर्शनम्।
"शुद्धान्तदुर्लभमिदं वपुराश्रमवासिनो यदि जनस्य।
दूरीकृताः खलु गुणैरुद्यानलता वनलताभिः॥ 1/17"
(अभि० शा०)

212

शकुन्तला का सौन्दर्य स्वभाविक है – "इदं किलाव्याजमनोहरं वपुः।" प्रियंवदा की इस – "अत्र तावत् पयोधरविस्तारयितृ आत्मनो यौवनमुपालम्भस्व" – उक्ति से यह प्रतीत होता है कि उसके अवयव व्यक्त हो गये हैं। मनमोहक नवयौवना शकुन्तला के कोमल शरीर पर वल्कलवस्त्र भी शोभा बढ़ाने वाला है। (5(1)

" इयमधिकमनोज्ञा वल्कलेनापि तन्वी
किमिव हि मधुराणां मण्डनं नाकृतीनाम् ॥20
(अभि-शा०)

उसका अधरोष्ठ नवीन पत्र के समान लाल है, उसके दोनो हाथ कोमल शाखाओं का अनुकरण करने वाले हैं तथा फूल के समान सुन्दर दृष्टिगोचर होने वाला यौवन उसके सभी अंगों में व्याप्त है। (—--- "अधर किसलयरागः कोमलविटपानुकारिणौ बाहू।
कुसुममिव लोभनीयं यौवनमंगेषु सन्नद्धम् ॥ 1/21 अभि० शा०)

तपोवन में पालन होने के कारण वह साक्षात् सुशीलता, लज्जाशीलता एवं सरलता की मूर्ति है।

कण्व के आश्रम की वह साक्षात् वनश्री है। प्रकृति के अञ्चल में लालन पालन होने से उसके हृदय में लता वीरुधादि के प्रति सहोदर के समान प्रेम उत्पन्न हो गया है – 'अस्ति मे सोदरस्नेहोऽप्येतेषु'। उसका जीवन आश्रम के शान्त और अकृतिम वातावरण में भोले-भाले पशु-पक्षियों के अकृतिम सौहार्द के मध्य व्यतीत हुआ है अतः वह प्रकृति से घनिष्ठ प्रेम करती है। उसके हृदय में चेतन एवं अचेतन सभी के लिए समान स्नेह है उसे तपोवन के मृगों से स्वभाविक ममत्व है। आश्रम के वृक्षों और वनस्पतियों को जल पिलाकर ही वह स्वयं जल पीती है। लताओं और वृक्षों में पुष्प और फल आने पर वह उत्सव मनाती है। यद्यपि उसे आभूषण प्रिय हैं फिर भी वह वृक्षों

Date: / /
Page No.:

और लताओं के कोमल-किसलय और पुष्प नहीं तोड़ती। आश्रम से विदा होते हुए वह तपोवन के वृक्षों और मृग आदि से भी अनिच्छा से नेत्रों में अश्रु भर कर विदाई लेती है। मृग शावक तो उसके अंचल को पकड़ कर उसे जाने से रोकता है।

जब राजा दुष्यन्त को मालूम होता है कि शकुन्तला विश्वामित्र के सम्पर्क से उत्पन्न मेनका नामक अप्सरा की पुत्री है तब वह कहता है कि इस सौन्दर्य की उत्पत्ति मनुष्यलोक की स्त्रियों में कैसे हो सकती है? कान्ति से चंचल ज्योति (विद्युत्) पृथ्वी से उत्पन्न नहीं होती। स्पष्ट है कि शकुन्तला मानवी-स्वर्गीय है। दुष्यन्त जैसा कुशल चित्रकार भी उसके रूपलावण्य को रेखाओं में बाँध नहीं सका। शकुन्तला के माधुर्य गुण ने राजा दुष्यन्त को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। वह उसके रूप पर मुग्ध होकर वृक्षों की ओट से देखता है और कहता है कि उस तन्वंगी शकुन्तला के शरीर सौंदर्य का स्मरण करके मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि विधाता ने अपने रचे हुए जगत् के सब जीवों के रूप-समूह को एकत्र करके मानो सम्पूर्ण रूपराशि एक जगह दिखाने के लिए उस स्त्री-रत्न की सृष्टि की है, उसके अछूते यौवन की शोभा का वर्णन करते हुए दुष्यन्त कहता है कि उसका निर्दोष सौन्दर्य न सूँघे गये पुष्प के समान, नाखूनों से न छेदे गये पल्लव के समान, न बींधे गये रत्न के सदृश, अनास्वादित नवीन मधु के समान तथा पुण्यकर्मों के अखण्डित फल के समान है। न जाने विधाता किस व्यक्ति को उसका उपभोक्ता बनाएगा।"

"अनाघ्रातं पुष्पं किसलयमलूनं कररुहै-
रनाविद्धं रत्नं मधु नवमनास्वादितरसम्।
अखण्डं पुण्यानां फलमिव च तद्रूपमनघं
न जाने भोक्तारं कमिह समुपस्थास्यति
विधिः॥ 2/10 (अभि० शा०)

Date: / /
Page No.:

शास्त्रीय दृष्टि से देखा जाय तो यह मुग्धा-नायिका है। राजा दुष्यन्त का उसके प्रति कथन है- "मुग्धासु तपस्विकन्यासु"। भारतीय संस्कृति के अनुसार नारी का भूषण लज्जा ही है - "नारीणां भूषणं लज्जा" शकुन्तला भी लज्जाशील एवं सरलहृदया कन्या है। उसकी अप्रगल्भता एवं स्पष्टीकरण दुष्यन्त के उस कथन से होता है-
"निसर्गादेवाप्रगल्भस्तपस्विकन्याजनः।" वह लोक-व्यवहार से सर्वथा अनभिज्ञ तथा शीघ्र विश्वास कर लेने वाली नायिका है राजा दुष्यन्त को देखते ही उसके मन में अनुभूत प्रेम विकार पैदा हो जाता है तपोवन में राजा को देखकर उसके हृदय में कामभावना जागृत होती है किन्तु वह उसे प्रकट नहीं करती। तृतीय अङ्क में अत्यधिक अस्वस्थ हो जाने पर भी वह अपनी हृदय की भावना को सखियों को बताने में संकोच करती है। उनके बहुत अधिक आग्रह पर ही वह अपनी मदन-व्यथा प्रकट करती है। राजा से अपनी प्रशंसा सुनकर वह लज्जा का अनुभव करती है। वह मधुर भाषिणी है और अपने शिष्ट एवं मधुर भाषण से अपने संपर्क में आने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है। वह काव्य-कला में भी निपुण है तथा स्वरचित कविता में ही दुष्यन्त को प्रेम-पत्र लिखती है। तपोवन से विदा होते समय वह अपने पिता कण्व के चरणों पर गिर पड़ती है। सप्तम अंक में दुष्यन्त के साथ मारीच ऋषि एवं अदिति के समक्ष जाने में भी वह लजाती है।

तपस्विनी होते हुए भी शकुन्तला गृहस्थ है ऋषिकन्या होने पर भी वह एक प्रेमिका है। तपोवन के शान्त वातावरण में लालित-पालित होने पर भी उसके हृदय में नारी सुलभ प्रेम, उन्माद एवं उमंगे हैं। दुष्यन्त के समान उसके चरित्र का महत्व भी उसके उत्कर्ष

215

Date: / /
Page No.:

एवं अपकर्ष में है। प्रारम्भ में उद्दाम एवं प्रबल प्रेम एवं काम के वशीभूत होकर बिना गुरुजनों की अनुमति के गान्धर्व विवाह करने से उसके चरित्र का पतन ही होता है; किन्तु बाद में पश्चाताप, व्रत तथा तपस्या से उसका उत्थान होता है। शकुन्तला ~~स्वाभिमानी~~ स्वाभिमानिनी भी है। अपना अपमान होने पर वह क्रुद्ध भी हो उठती है। दुष्यन्त के द्वारा अस्वीकार किये जाने पर तथा समस्त नारी जाति पर "अशिक्षितपटुत्व" का आरोप लगाये जाने पर वह क्रोध पूर्वक राजा से कहती है — "क इदानीमन्यो धर्मकञ्चुकप्रवेशिनस्तृणोच्छन्न-कूपोपमस्य तवानुकृतिं प्रतिपत्स्यते ?"

शकुन्तला स्वाभिमानिनी नायिका है प्रेम की अवहेलना होने पर यही सरल सुकोमल हृदया शकुन्तला अतिक्रुद्ध हो जाती है ~~राजभवन में आके~~ शार्ङ्गरव की भर्त्सना से शकुन्तला को मर्मान्तक वेदना हुई। आत्मीयजनों से भी तिरस्कृत एवं अपमानित होने पर वह पृथ्वी माता से प्रार्थना करती है— "भगवति वसुधे! देहि मे विवरम्।"

शकुन्तला सती-साध्वी पतिव्रता गृहिणी है। अपने पति के लिए उसे अपार प्रेम है। विवाह के बाद पति के हस्तिनापुर चले जाने पर वह सदा उसी की चिन्ता में मग्न रहती है उसे दुर्वासा मुनि के आगमन तथा शाप देकर जाने का भी ज्ञान नहीं होता है। पतिगृह जाने के ~~काक~~ लिए उसके हृदय में पर्याप्त उत्साह है। पति के द्वारा शापवश न पहचाने जाने पर वह क्षण भर के लिए क्रुद्ध तो होती है, किन्तु दोष अपने दुर्भाग्य को ही देती है। पति के अनिष्ट एवं अपकार की भावना उसके हृदय में एक क्षण के लिए भी नहीं आती। मारीच के आश्रम में तपस्विनी के रूप में रहती हुई भी वह पति के हित की ही कामना करती है। वहाँ हमें उसकी पुत्रवत्सलता एवं मातृत्व की झलक दिखाई देती है। उसके हृदय का समस्त प्रेम अपने

Scanned with CamScanner

अपने पुत्र के लिए उमड़ पड़ता है। पति के द्वारा अन्त में स्वीकार कर लिए जाने पर वह अपने प्रति किये गये अन्याय को भूल जाती है और उसे क्षमा कर देती है। अतः वस्तुतः कालिदास ने शकुन्तला को प्रेमिका से देवी के पद पर सुशोभित कर दिया है। वह वस्तुतः विश्व साहित्य की एक अनुपम, उज्ज्वल एवं पावन-चरित-सम्पन्न अद्वितीय नायिका है तथा प्रेम, सौहार्द, लज्जा, करुणा, शालीनता, नारीत्व एवं मातृत्व की साक्षात् प्रतिमा है।

नायिका के रूप में शकुन्तला के चरित का यह क्रमिक विकास परम स्वाभाविक है। नाटक के अन्त में सपत्नी, सदपत्य तथा सत्पुमान् तीनों के सम्मिलन से जीवन यज्ञ पूर्ण हो गया। यही मानव जीवन का चरम आदर्श है। इस चरम आदर्श की प्राप्ति के केन्द्र में आदर्श नायिका शकुन्तला का ही चरित सर्वत्र विद्यमान है। इसी के इर्द-गिर्द सारी घटनाएँ घटी हैं। दुःखाग्नि में दग्ध तपोबल से पूर्ण होकर उसका लोकादर्श चरित रत्न की तरह विश्व के मंच पर उपस्थित होता है। उसका पूर्व रागात्मक पार्थिव प्रेम अपार्थिव आध्यात्मिक प्रेम में परिणत हो जाता है। इसमें सत्य, शिव, एवं सुन्दर तीनों एक साथ प्रकट हो गये हैं। उसे यह सर्वोत्तम गौरव मातृत्व के रूप में ही प्राप्त होता है। यही गृहस्थाश्रम का चरम उत्कर्ष है जिसकी स्थापना कालिदास ने अभिज्ञानशाकुन्तलम् में की है। मनु ने भी इसी गृहस्थाश्रम को सभी आश्रमों में श्रेष्ठ माना है। (मनु)

"यथा वायु समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्तन्ते सर्व आश्रमाः॥
यस्मात्त्रयोऽप्याश्रमिणो, ज्ञानेनान्नेन चान्वहम्
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमी गृही॥ 3/77-78
(मनु)

शकुन्तला कालिदास के रूपकों की सभी नायिकाओं

में प्रेरक है। उर्वशी को प्रणय में स्वयं कष्ट नहीं सहना पड़ा। लतारूप में वह पुरूरवा को ही तरसाती रही। अन्त में उसकी धर्मसंगिनी बन जाने पर भी, उसे लोकमत का भय सदैव बना रहा है। मालविका विशुद्ध एवं निर्दोष है। वह राजमहल के वातावरण में पली है। अतः उसके चरित्र में नागरी गुणों का विकास है। उर्वशी तथा मालविका में वस्तुतः लोकजीवन की पोषक सामग्री का अभाव है। शकुन्तला इन दोनों से भिन्न है। वह पवित्र, निर्दोष एवं शुद्धशीला है। अनवद्य सुषमा एवं पवित्रता के कारण वह लोकानुकरणीय एवं वन्दनीय है।

2. अनसूया एवं प्रियंवदा का चरित्र-चित्रण :-

अनसूया एवं प्रियंवदा दोनों शकुन्तला की अभिन्न सखियाँ हैं। तीनों की उम्र क्रमशः बराबर ही है। "अहो मधुरमासां दर्शनम्" तीनों ही सखियाँ सुन्दर हैं। शकुन्तला इन तीनों की अपेक्षा अधिक सुन्दर है। आयु में अनसूया सबसे बड़ी प्रतीत होती है। तीनों में घनिष्ठ प्रेम है। वे सभी एक दूसरे को सुखी देखना चाहती हैं। शकुन्तला की विदाई के समय दोनों सखियों के रोने पर कण्व पहले उसे ही समझाते हैं। दुष्यन्त के आश्रम में प्रवेश करने पर वह ही सर्वप्रथम उससे बातचीत करती है। और शकुन्तला की दिव्य उत्पत्ति का वृतान्त उसे बतलाती है।

कालिदास ने नायिका शकुन्तला की प्रिय सखियों के रूप में इन दोनों की सृष्टि कर अपनी असामान्य प्रतिभा एवं नाट्यकला-निपुणता का पूर्ण परिचय दिया है। वृक्षसिंचनकाल में मात्र रूपलिप्सा पर आधारित पूर्वराग को अनसूया एवं प्रियंवदा की उपस्थिति से सहिष्णु बनाया गया है। नाटक में

इन्हीं दोनों सखियों के साथ शकुन्तला के रूपलावण्य एवं गुण वैशिष्ट्य का सम्यक् विकास हुआ है इन तीनों के साधारण रूप लावण्य से आकृष्ट होकर राजा दुष्यन्त आनन्दविभोर एवं आश्चर्यचकित हो जाता है।

दोनों सखियों के चरित्र में कुछ समानतायें एवं विशेषताएँ दृष्टिगोचर होती हैं। दोनों का शकुन्तला के प्रति प्रेम निःस्वार्थ है। शकुन्तला का सुख और प्रसन्नता ही दोनों का लक्ष्य है। दोनों शकुन्तला को अपनी सहोदर बहन मानती हैं। दोनों ही सुशील, शिष्ट, प्रियभाषिणी, विनयशीला, एवं वाग्मी हैं। शकुन्तला को अस्वस्थ देखकर एवं अस्वस्थता का कारण जान कर दोनों उसके स्वास्थ्य लाभ का प्रत्येक सम्भव उपाय करती हैं एवं राजा से उसके मिलन का प्रयत्न करती हैं। शकुन्तला को दिये गये दुर्वासा के शाप को श्रवण कर दोनों दुःखी होती हैं एवं महर्षि की अनुनय-विनय कर शाप निवृत्ति का उपाय ज्ञात कर लेती हैं। शाप की बात सुनाकर वे शकुन्तला को दुःखी नहीं करना चाहती — "को हि नामोष्णोदकेन नवमल्लिकां सिञ्चति।" किन्तु राजा के भूलने पर वे उसे स्मरण करने का उपाय बता देती हैं। दोनों बुद्धिमती हैं एवं अपना कर्तव्य पालन करती हैं। बड़ी निपुणता से शकुन्तला का श्रृंगार करती हैं — "जाने हि वा नैपुण्यम्।" दोनों राजा से बड़ी बुद्धिमानी से वचन लेती हैं कि वह शकुन्तला को सदा सुखी रखेगा।

दोनों के चरित्र में कुछ असमानतायें भी हैं। अपने नाम के अनुसार प्रियंवदा प्रिय एवं मधुरभाषिणी है। वह अधिक परिहासप्रिय तथा भावनाशील है। किन्तु अनसूया अधिक गम्भीर एवं चिन्तनशील है। वह विचारशील एवं मितभाषिणी है।

वह अधिक परिहासप्रिय तथा लज्जाशील है। किन्तु अनसूया अधिक गम्भीर एवं चिन्तनशील है। वह विचारशील एवं मितभाषिणी है। वह किसी बात का सोच विचार कर उत्तर देती है किन्तु प्रियंवदा बातों को शीघ्र निर्णय करती है और अधिक बोलती है। प्रियवादिनी होने के कारण ही उसकी बात का कोई बुरा नहीं मानता। प्रियंवदा भविष्य की अपेक्षा वर्तमान को अधिक सुन्दर बनाने का प्रयत्न करती है। वह वर्तमान को अधिक महत्व देती है। अनसूया शकुन्तला के भावी सुख के लिए चिन्तित है किन्तु प्रियंवदा शकुन्तला एवं दुष्यन्त के वर्तमान में मिलन से ही प्रसन्न है। प्रियंवदा अपना निर्णय शीघ्र लेती है किन्तु अनसूया गम्भीरतापूर्वक सोचविचार कर। अनसूया कुछ शंकालु प्रवृत्ति की है। वह राजा पर सहसा विश्वास नहीं करती और उससे कहती है कि राजाओं के कई पत्नियाँ होती हैं, हमारी प्रिय सखी को कोई कष्ट न हो ऐसा करना — "बहुवल्लभा राजानः श्रूयन्ते। यथा नौ प्रियसखी बन्धुजनशोचनीया न भवति तथा निर्वाहय।" किन्तु प्रियंवदा राजा पर तुरन्त विश्वास कर लेती है — "न तादृशा आकृति विशेषा गुणविरोधिनो भवन्ति।" अतः वह उसका अवश्य स्मरण करेगा। किन्तु परिणाम उसके विपरीत होता है। अनसूया धीर प्रकृति की है किन्तु प्रियंवदा शीघ्र अधीर हो जाती है। दुर्वासा के शाप को सुनकर अनसूया अधिक चिन्तित और दुःखी नहीं होती अपितु उसके निराकरण का उपाय जानने के लिए प्रियंवदा को भेजती है, किन्तु प्रियंवदा तो घबरा ही जाती है। अनसूया अधिक व्यवहार कुशल है किन्तु प्रियंवदा अधिक भावुक है।

Date: / /
Page No.:

गौतमी का चरित्र-चित्रण ->

गौतमी कण्व की धर्म-भगिनी है। वह तपस्या की प्रतिमूर्ति है। सरल स्वभाववाली है निश्छल है। दया धर्म की पेटारी है। इसका नाम लेते ही ऐसा प्रतीत होता है— एक कृशकाय तपस्या-जर्जर महिला सामने खड़ी है। सीधा-सादा निराभरण वेश। मस्तक पर चमकती तपस्या की रेखायें पड़ी है। शकुन्तला अस्वस्थ है। उस बेचारी तपस्विनी को क्या पता कि वह किस खेल में अलमस्त है। अपने 60-70 वर्ष के जीवन में कभी सांसारिकता की ओर उसकी मनोवृत्ति गई ही नहीं थी। किसी वसन्त की बयार ने उसके मन और शरीर पर गुदगुदी पैदा हीन कर सकी थी। अतः वह समाचार पाते ही मन्त्रपूत जल होकर शकुन्तला के ~~[illegible]~~ पास पहुँचती है। जल से सींचती है। प्यार से पूछती है-'बिटिया, तुम्हारे शरीर का सन्ताप कुछ कम हुआ?' शकुन्तला कुछ भाम होने का उत्तर देती है। बेचारी बुढ़िया उस तापसी को क्या पता कि उसके रोग की असली दवा मिल गई है। चल रही है। और मैं आकर उसमें कुछ विघ्न किया है। वह शकुन्तला को बड़े प्यार के साथ-साथ ले जाती है। उसकी सेवा करती है।

गौतमी के ~~सच~~ सदाचार और सद्व्यवहार का ही परिणाम है कि कण्व जैसे महर्षि भी उसका समादर करता है (क) (कथं वा गौतमी मन्यते। (पृ० 247) अभि० शा०। हस्तिनापुर में राजा के समक्ष गौतमी जिस धैर्य और सरलता से अपना कर्तव्य निभाती है, उससे दर्शकों का हृदय प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। राजा शकुन्तला के साथ ही उसका भी अपमान करता है। स्त्री-समूह की निन्दा करता है। उन्हें धूर्त बतलाता है किन्तु तपस्विनी गौतमी शान्त और निर्विकार बनी रहती है। नारी की पृथिवी-सदृश क्षमाशीलता और सहिष्णुता का वह निदर्शन है। वस्तुतः भारत का अतीत गौतमी जैसी आर्य महिलाओं के पावन चरित्र से उज्ज्वल है, धन्य-धन्य है।

Scanned with CamScanner

Date: / /
Page No.:

काचरित-चित्रण

विक्रमोर्वशीयम की नायिका उर्वशी : कालिदास के रूपकों की दूसरी नायिका है। यह वस्तुतः अप्सरा है, जो तपस्या की प्रचुरता से निरन्तर सशंक इन्द्र का सुकुमार अस्त्र रही है, जिसने सौन्दर्यगर्विता लक्ष्मी को परास्त किया है, जिससे स्वर्ग की शोभा है। लेकिन कालिदास ने नैसर्गिक शक्तियों के साथ मानवीय गुणों से सम्पन्न नायिका के रूप में इसका चित्रण किया है। नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से यह प्रगल्भा नायिका है। इसका आचरण कुलवधू के समान है।

कालिदास के त्रोटक की उर्वशी एक प्रसन्नवदना अलौकिक रूपवती सुन्दरी है। उसमें दैवी एवं मानवी गुणों का मिश्रण पाया जाता है। यह नारायण मुनि की जाँघ से उत्पन्न हुई थी। इसके असाधारण रूप को देखकर पुरूरवा को संदेह होने लगा कि ऐसा सुन्दर रूप कोई तपस्वी उत्पन्न नहीं कर सकता। इसकी सृष्टि के लिए कान्ति प्रदान करने वाला चन्द्रमा स्वयं ब्रह्मा बना होगा। अथवा श्रृंगाररस के देवता कामदेव ने इसे बनाया हो या कुसुमाकर वसन्त ने इसकी रचना की होगी।(1) उर्वशी विलक्षण सुन्दरी है। उसका शरीर आभरणों का आभरण, श्रृंगार-प्रसाधनों का प्रसाधन तथा उपमानों का भी प्रत्युपमान है।(2) यह पूर्ण यौवना है ~~यह~~ सुन्दर सुविकसित नितम्बवाली, कदली वृक्ष के समान सुदृढ़ जाँघों वाली (रम्भोरु) स्थूल एवं उन्नत स्तनवाली (पीनतुङ्गघनस्तनी), स्थिर यौवनवाली (स्थिरयौवना) है।(3) अतः यह शकुन्तला की तरह 'मुग्धा' नहीं है, अपितु प्रारम्भ से ही 'प्रगल्भा' है।

~~पहली मुलाकात में ही राजा पुरूरवा के अन्दर भी उर्वशी को~~

(1) विक्रमोर्वशीयम – (1/8)"
(2) राजा – आभरणस्याभरणं प्रसाधनविधेः प्रसाधनविशेषः।
उपमानस्यापि सखे प्रत्युपमानं वपुस्तस्याः ॥2/3॥ विक्र
(3) विक्रमोर्वशीयम – (4/58, पृ- 183)
(4) ~~उर्वशी – [illegible]~~ उर्वशि खलु
~~[illegible]~~

222

Date: / /
Page No.:

केशी नामक दैत्य से मुक्त कराकर लाने पर कुछ देर के बाद जब उर्वशी को होश हुआ तब सखियों से मालूम हुआ कि महेन्द्र सदृश पराक्रमी राजा पुरूरवा ने उसे मुक्त कराया है। वहाँ उपस्थित पुरूरवा को पहली बार ही देखकर उसके लिए अभिलाषा करते हुए मन ही मन यह कहती है कि दानवों ने उपकार ही किया। पुनः इन्द्र के पास अपनी सखियों के साथ जाते समय उर्वशी पुरूरवा के प्रति हार्दिक अनुराग से पूर्ण होकर झाड़ियों में एकावली फँसने के बहाने मुड़कर सस्पृह भाव से देखती है।

पहली मुलाकात में ही राजा पुरूरवा के अन्दर भी उर्वशी के लिए अभिलाषा हो जाती है। केशी दैत्य से मुक्त कराकर आते समय विषम भूमि में रथ के हिलने-डुलने के कारण उसके कन्धे से राजा के कन्धे का स्पर्श होने पर रोमांच उत्पन्न हो गया। इस स्पर्श-सुख का अनुभव कर राजा कहता है – "दत्तफलो मे विषमावतारः" उसके बाद सखियों के साथ इन्द्र के पास जाते समय उर्वशी के मार्ग की ओर देखकर वह कह उठता है कि कामदेव दुर्लभ वस्तु के प्रति भी अभिलाषा पैदा करता है। आकाश में जाती हुई यह मेरे शरीर से मेरे मन को खींच रही है। (1)

दोनों एक दूसरे के प्रणयपाश में आबद्ध हो जाते हैं। इधर पुरूरवा उर्वशी के लिए विकल है तो उधर उर्वशी भी राजा से मिलने के लिए बेचैन है। वह स्वयं विरह-व्यथित होकर अपनी सखी चित्रलेखा के साथ पुरूरवा से मिलने चली जाती है। वह अपने इस व्यवहार को "निर्लज्ज उद्योग" समझती है। (विक्र० अंक 2, पृ० 55) जब चित्रलेखा उससे इस उद्योग पर भलीभाँति विचार करने के लिए कहती है तब वह कहती है कि कन्दर्प मुझे

(1) राजा – (उर्वशीमार्गोन्मुखः) अहो न खलु ~~दुर्लभाभिनिवेशी~~
दुर्लभाभिनिवेशी मदनः।
एषा मनो मे ~~प्रसभं~~ प्रसभं शरीरात्पितुः पदं मध्यममुत्पतन्ती
सुराङ्गना कर्षति खण्डिताग्रात्सूत्रं मृणालादिव राजहंसी॥ 18॥
विक्र-अंक 1)

Date: / /
Page No.:

प्रेरित कर रहा है, अतः इसमें क्या सोच-विचार किया जाय (1) अन्ततोगत्वा वह उसके पास जाती है तथा "अपराजिता" नामक शिखाबन्धनी विद्या के प्रभाव से अपने को अदृश्य रखकर राजा की मनोव्यथाजन्य वार्ता सुनती है। राजा के उपालम्भ (2) को सुनकर उर्वशी अपनी सखी के कथनानुसार प्रभाव से भूर्जपत्र पैदा कर उस पर अपना प्रेमलेख लिखती है तथा राजा के सामने हवा में फेंक देती है। राजा उस प्रेमपत्र को पढ़ता है- स्वामिन्! अनुराग से पूर्ण हृदयवाले आपके प्रति हमारा जैसा अज्ञान अथवा औदासीन्य आपने स्थिर कर रखा है, यदि वैसी ही बात रहती तो मेरी यह देह पारिजातपल्लव से बने शयन पर भी क्यों छटपटाती तथा उसे नन्दनवनवायु से भी संताप क्यों होता ? (3) इसे पढ़कर राजा विदूषक से कहता है कि मुझे ऐसा प्रतीत होता है मानों मेरा मुँह उसके बड़ी-बड़ी बरुनियों वाले मुँह से मिल गया हो (4/5) । राजा की इस हार्दिक अभिव्यक्ति पर अलक्ष्य उर्वशी कहती है कि यहाँ तक हम दोनों का स्नेह समान है। यह भी पुरूरवा की चिन्ता में कृशकाय हो गयी है। वह चित्रलेखा के माध्यम से अपने को पुरूरवा के हाथों में समर्पित करती हुई अपनी कामवेदना की शान्ति के लिए भी पूर्ववत् सहायता की याचना करती है (5) इस पर राजा ने कहा कि वह प्रेम उभयनिष्ठ है, काम ने दोनों को समभाव से सताया है (5) । इसी अवसर पर वह अप्सराश्रित अभिनय अभिनय के लिए अविलम्ब इन्द्र के पास जाने के निमित्त देवदूत से संवाद पाकर दुःखी हो जाती है। (उर्वशी विषाद नाटयति) । अन्त में राजा से अनुमति लेकर

(1) विक्र० अंक 2 (पृ० 56) ।

(2) विक्र० अंक 2 ।, (पृ० 65) ।

(3) विक्र० 2/12-13; (पृ० 67) ।

(4) " अंक 2 (पृ० 72) "

(5) वि० 2/16, (पृ० 73) "

Scanned with CamScanner

वह वियोग-दुःख व्यक्त करती हुई सखी के साथ इन्द्र के पास जाती है। (१) (विक्र० अंक २, पृ० ७७)। उसकी इस भावमुद्रा को देखकर राजा पुरूरवा अनुभव करता है कि शरीर पर तो उसका अधिकार नहीं था, परन्तु स्वाधिकारवर्ती हृदय मुझे देती गयी है। (२) विक्र (२/१९)। पुरूरवा के प्रति उसकी इतनी प्रगाढ़ आसक्ति हो गयी कि वह अभिनय के समय पूर्वासक्तिवश "पुरुषोत्तम" के बदले "पुरूरवा" नामोच्चारण कर देती है। (३) विक्र० (अंक ३, पृ० ९४)। फलतः वह भरत मुनि से स्वर्गच्युत होने का अभिशाप पाती है। तदनन्तर अभिनय के अन्त में इन्द्र ने शाप में सुधार कर पुत्रमुख-दर्शन-पर्यन्त यथेच्छ पुरूरवा के साथ उसे रहने का आदेश दिया।

विरहाकुल उर्वशी अभिसारिका वेश में सुसज्जित होकर अपनी ~~सखी~~ सखी चित्रलेखा को पुरूरवा के पास ले चलने का अनुरोध करती है। पुरूरवा के राजभवन में पहुँचने पर वह चित्रलेखा से कहती है कि अपने प्रभाव से पता लगाओ कि वह मेरा हृदय-चोर ~~पुरूरवा~~ पुरूरवा कहाँ है। जब चित्रलेखा उसे बताती है कि राजा उपभोग के योग्य स्थान में ही है। तब उर्वशी खेद प्रकट करती है। पुनः तिरस्करिणी ~~हटाये~~ हटाये बिना उर्वशी राजा की विरहोत्कंठा की बातें सुनकर उसके समीप जाती है। इसी समय प्रियानुप्रसादनव्रत के अनुष्ठान के लिए महारानी औशीनरी पहुँचती है। उसे देखकर उर्वशी स्वीकार करती है कि इन्द्राणी से इसमें कोई कमी नहीं है, अतः इसके लिए देवी शब्द का प्रयोग ठीक ही है। औशीनरी के प्रति राजा का व्यवहार देखकर उर्वशी कहती है कि रानी के लिए इसके हृदय में बड़ा स्नेह है (महन्तो खु से इमास्सिं बहुमाणो)। अपनी रानी के प्रति राजा पुरूरवा के प्रगाढ़ प्रेम को जानकर भी उर्वशी उसके प्रति अपने प्रेम प्रकाशन के लिए सर्वथा सुदृढ़ है। रानी औशीनरी के जाने

के बाद राजा के मनोरथ के अनुसार पीछे से आकर राजा की आँखें बन्द कर देती है। राजा उसे अपने आसन पर बैठाता है। वह अपनी सखी से कहती है कि देवी ने महाराज को दानकर मुझे दिया है अतः इनकी प्रेमिका की तरह इनके शरीर से सट गयी हूँ। मुझे दोष मत देना। इस समागम सुख के बाद राजा बेहद खुश होता है। उसकी सारी मनोवृत्ति बदल जाती है (3/19-20)।

उर्वशी का पुरुरवा पर इतना गहरा प्रेम है कि वह अपने सद्योजात शिशु को भी वियोग-भय से दूर रखती है। वह उसे पालन के लिए सत्यवती के हाथ में सुपुर्द कर देती है। वस्तुतः उसका यह बहुत बड़ा त्याग है। माता होकर पतिप्रेम के निर्वाह के लिए सन्तान को अलग रखना कठिन कर्म है, किन्तु उसने इसका यथासंभव निर्वाह किया। आयु के बड़ा होने पर जब सत्यवती उसे लौटाती है तब इन्द्र द्वारा दी गई शर्त को याद कर उर्वशी रोने लगती है। उसे चिन्ता होती है कि अब उसे पुरुरवा से वियुक्त होकर स्वर्ग चला जाना पड़ेगा; क्योंकि उसने अपने पुत्र का मुँह देख लिया है।

उर्वशी में स्त्री-सुलभ ईर्ष्या की भी कमी नहीं है। गन्धमादन पर्वत पर विहार करते समय विद्याधर कुमारी उदयवती के सौन्दर्य से आकृष्ट होकर बहुत देर तक देखते रहने के कारण राजा पुरुरवा पर वह क्रुद्ध हो उठी तथा स्वामी का अनुनय न मान कर कुमारवन में प्रवेश कर गई। वहाँ जाते ही वह वन्यलता के रूप में परिणत हो गई।

वह अत्यधिक विनीत स्वभाव की है। संगमनीय मणि को लेकर राजा ने ज्योंही उस लता का स्पर्श किया त्योंही वह लता उर्वशी के रूप में परिणत हो गई। इसके बाद वह अपने क्रोध के कारण राजा की हुई विपन्न अवस्था के लिए माफी माँगती है।

यद्यपि ~~पुरूरर~~ पुरूरवा के प्रति प्रगाढ़ प्रेम के कारण तथा उससे वियुक्त न होने की कामना से उर्वशी ने अपने पुत्र को अलग कर दिया था, फिर भी उसके अन्दर मातृ - सुलभ वात्सल्य का अभाव नहीं है। राजा की गोद में अपने पुत्र आयु को देखकर ~~और~~ और पहचान कर वात्सल्य भाव के कारण उसके स्तन में दूध उतर जाता है। (1) इस तरह कालिदास ने शकुन्तला की तरह इसे भी मातृत्व की महिमा से मंडित किया है। वह कदापि पुरूरवा से विलग होना नहीं चाहती है। नारद से इन्द्र द्वारा भेजे गये इस संदेश — "इयं चोर्वशी यावदायुस्तव सहधर्मचारिणी भवत्विति" को सुनकर बहुत खुश होती है और कहती है कि मेरे हृदय का काँटा निकल गया। उर्वशी लोक-मर्यादा से ग्रस्त है। अतः सोचती है कि प्रजा राजा के इस दीर्घकालीन वियोग के कारण कोसती होगी — "प्रियंवदा महानुखलु कालस्तव ~~प्रतिष्ठा~~ प्रतिष्ठानिर्गतस्य। कदाचिद् असूयायन्ति मदां प्रकृतयः तदेहि ~~वि~~ निवर्तावहे।"

//